खंड-2
उपखंड-6

प्राचीन भारत में स्थापत्य कला का विकास
(Development of Architecture in Ancient India)

प्राचीन भारत में कला का एक समृद्ध इतिहास रहा है। इसमें स्थापत्य अथवा वास्तुकला, मूर्तिकला, चित्रकला, संगीत एवं नृत्य सभी शामिल हैं।

अगर हम स्थापत्य कला के इतिहास पर अवलोकन करते हैं, तो हमें यह बात ज्ञात होती है कि इसके क्रमिक विकास का एक लम्बा इतिहास रहा है और इसे विविध कारकों से प्रेरणा मिली है।

स्थापत्य कला
↓
राजनीतिक | आर्थिक | सामाजिक | धर्म-दर्शन

- **राजनीतिक कारकः** स्थापत्य निर्माण निम्नलिखित रूप में राजनीतिक कारक से प्रेरित रहा है-

1. कई बार स्थापत्य के माध्यम से राजा अथवा शासक दूरवर्ती क्षेत्र तक अपनी उपस्थिति बनाए रखना चाहता था तथा उससे राज्य की सीमा भी निर्धारित होती थी।
2. मंदिरों के निर्माण के माध्यम से शासक अपने राजकीय गौरव को व्यक्त करने का भी प्रयास करते थे। उदाहरण के लिए, चोल शासक राजाराज प्रथम का बृहदेश्वर मंदिर तथा राजेन्द्र प्रथम का गंगईकोंडचोलपुरम का मंदिर उनकी राजनीतिक विजय का प्रतीक है।
3. दूसरी सदी के पश्चात् विभिन्न राजवंशों ने कुलदेवता की अवधारणा विकसित कर ली थी। इनमें विष्णु, शिव, सूर्य एवं दुर्गा महत्वपूर्ण थीं। इन्हें सम्मानित करने के लिए भी मंदिरों का निर्माण किया जाता था।

- **आर्थिक कारकः** आर्थिक संवृद्धि की स्थिति में कलात्मक गतिविधियों को विशेष प्रोत्साहन मिलता था। उदाहरण के लिए, मौर्योत्तर काल में जब रोमन व्यापार के कारण आर्थिक संवृद्धि आयी, तो बड़ी संख्या में चैत्यों, स्तूपों और विहारों का निर्माण किया गया। उसी प्रकार, संभवतः गुप्त काल में आर्थिक संवृद्धि बनी रही थी, इसलिए इस काल में बड़ी संख्या में मंदिरों का निर्माण हुआ।

- **सामाजिक कारकः** कई बार कोई सामाजिक समुदाय अपनी पहचान बनाने के लिए मंदिरों का निर्माण करता था। उसी प्रकार, अपने पूर्वजों को सम्मानित करने के लिए भी मंदिरों का निर्माण कराया जाता था। इसके अतिरिक्त, किसी प्रभावशाली व्यक्ति की मृत्यु पर भी स्मारक के रूप में मंदिर का निर्माण किया जाता था।

- **धर्म एवं दर्शनः** मंदिर निर्माण की गतिविधियाँ धर्म एवं दर्शन के साथ अभिन्न रूप में जुड़ी रही हैं। अलग-अलग धार्मिक पंथ के लोग अपने इष्ट देवता को सम्मान देने के लिए मंदिरों का निर्माण करते थे।

जहाँ तक दर्शन का सवाल है, तो स्तूप अथवा मंदिर अपने आप में सम्पूर्ण संसार को व्यक्त करता है। उदाहरण के लिए, स्तूप का अंड भाग मेरू पर्वत को व्यक्त करता है, जिसे संसार के केन्द्र में माना जाता है। उसके ऊपर निर्मित स्तम्भ आकाश एवं जमीन को विभाजित करता है।

उसी प्रकार, मंदिर का गर्भगृह मेरू पर्वत का प्रतीक माना जाता है, जो संसार के केन्द्र में अवस्थित है। फिर गर्भगृह के चारों ओर वृत्ताकार प्रदक्षिणा पथ समय की गति को दर्शाता है। मंदिर का ऊँचा शिखर इस संसार का प्रतीक है तथा शिखर के ऊपर निर्मित मूर्तियाँ विभिन्न आकाशचारी प्राणियों का निवास स्थल होती हैं।

मौर्यकालीन स्थापत्य

इसका गहरा संबंध अशोक महान से रहा है तथा इसकी दो प्रमुख विशेषताएं रही हैं। प्रथम, यह बौद्ध विचारों से प्रेरित रहा तथा दूसरा, यह राजकीय संरक्षण में पला एवं बढ़ा। इसके निम्नलिखित रूप प्रकट होते हैं-

1. अशोक के स्तम्भ- अशोक के स्तम्भ चुनार पत्थर से निर्मित हैं। ये एकाश्म (Monolithic)पत्थर से ही निर्मित हैं अर्थात् एक ही पत्थर से पूरे स्तम्भ का निर्माण किया गया है। इस स्तंभ के दो भाग हैं, प्रथम भाग है यष्टि (Pillar) और दूसरा भाग है गावदुम लाट (head)। यष्टि के अंत में अवांगमुखी कमल (Inverted Lotus) है जिसके ऊपर एक चौकी निर्मित है, कहीं-कहीं चौकी पर हंस पक्तियाँ बनायी गयी हैं। सारनाथ की चौकी पर चक्र अंकित है। फिर चौकी के ऊपर पशु आकृतियाँ बनायी जाती थीं। सामान्यतः पशुओं के रूप में हाथी, घोड़े, सांड एवं शेर (सिंह) का प्रतिनिधित्व मिलता है। किंतु सारनाथ में चार शेरों को एक-दूसरे के साथ पीठ टिकाए हुए बैठा दिखाया गया है।

2. स्तूप- अशोक कालीन स्थापत्य का एक उदाहरण है- स्तूप निर्माण। उसके काल से जुड़ा हुआ स्तूप साँची का महीन स्तूप है जो स्तूप निर्माण की आरंभिक अवस्था को दर्शाता है। सामान्यतः स्तूप एक अर्द्धवृत्ताकार संरचना होती थी। आरंभिक स्तूप ईंटों से निर्मित किया गया था। उसका ऊपरी भाग समतल होता था, जिसमें हर्मिक (चैम्बर) का निर्माण किया जाता था। उसमें बुद्ध अथवा किसी महत्वपूर्ण संत के शरीर का अवशेष रखा जाता था। हर्मिक के ऊपर एक लकड़ी का स्तम्भ निर्मित किया जाता था, जो समय के साथ नष्ट हो गया। स्तूप को एक छोटी-सी चहारदीवारी से भी घेरा जाता था।

3. गुफा वास्तुकला- अशोक के काल में ही पहाड़ों को काटकर गुफाओं का निर्माण आरम्भ हुआ। आरम्भिक गुफाएं गया में बराबर की पहाड़ी में निर्मित की गयी थीं तथा इन्हें आजीवकों को दान में दिया गया। उसी प्रकार, उसके पौत्र दशरथ ने नागार्जुनी की पहाड़ी में कुछ गुफाएँ निर्मित कर आजीवकों को दान में दीं। आरम्भिक गुफाएं सादी एवं सामान्य प्रकार की थी। किंतु धीरे-धीरे ये गुफाएं जटिल होती गयीं। आरम्भिक गुफाओं का निर्माण बहुत ही सादा था। गुफा के मुख को आयताकार काटा जाता था तथा उसमें रहने के लिए निवास स्थल बनाया जाता था। उस निवास स्थल की छत को तथा उसके आयताकार दरवाजे पर काली लेप चढ़ाई जाती थी। अशोक के द्वारा निर्मित यही गुफा वास्तुकला आगे विकसित होती हुई बौद्ध मंदिर तथा फिर पल्लव शासकों के अधीन हिंदू मंदिरों में विकसित हुई।

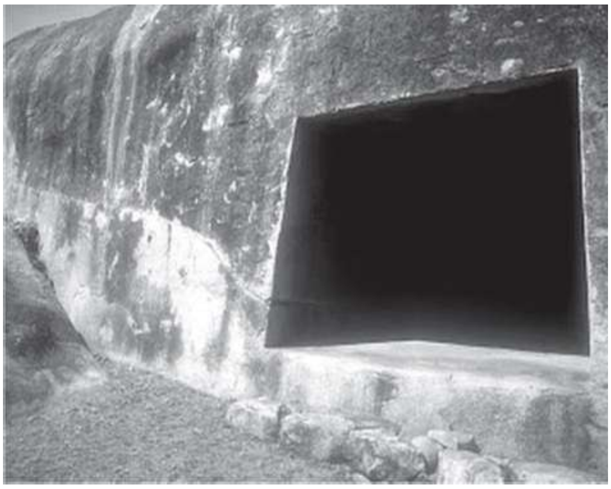

मौर्योत्तरकालीन स्थापत्य

इस काल में भी कला की मूल उत्प्रेरणा बौद्ध धर्म से ही मिली। किंतु इस काल में निश्चय ही कला के सामाजिक आधार का विस्तार हुआ था। वस्तुतः जैसाकि हमने पीछे देखा कि मौर्य कला राज्य संरक्षण में ही पली एवं बढ़ी थी, किंतु इस काल में शासक वर्ग के अतिरिक्त कुलीन, व्यापारी, भिक्षु-भिक्षुणियाँ सभी ने कला को संरक्षण दिया। इस काल में स्थापत्य कला के निम्नलिखित रूप देखने को मिलते हैं-

■ **स्तूप**- मौर्योत्तर काल में स्तूप कला का बेहतर विकास देखने को मिलता है। इसमें निम्नलिखित कलात्मक विशेषताएँ थीं-

1. यह अर्द्धवृत्ताकार आकृति थी। इसका निर्माण ईंटों से किया जाता था, परन्तु ऊपर से पत्थर बिछाया जाता था।

2. इसका ऊपरी भाग समतल होता था, जिसमें एक चैम्बर का निर्माण किया जाता था। इसे हर्मिक कहा जाता था। इसमें किसी पवित्र व्यक्ति का अवशेष रखा जाता था।

3. इसके ऊपर प्रस्तर का एक स्तम्भ बनाया जाता था, जिस पर तीन छतरियाँ बनाई जाती थीं जो करूणा, सहनशीलता तथा उदारता का प्रतीक होती थीं।

4. इसके चारों ओर वेदिका का निर्माण किया जाता था, जो प्रदक्षिणापथ का भी कार्य करता था।

5. इसे चाहर दीवारी से घेरा जाता था जिसमें सभी ओर से भव्य प्रवेश द्वार का निर्माण किया जाता था। इस प्रवेश द्वार पर मानव एवं पशु की मूर्तियाँ बनाई जाती थीं।

स्तूप के विषय में एक दिलचस्प तथ्य यह है कि यह बौद्ध पंथ के लोकप्रिय स्वरूप को प्रकट करता है। वस्तुतः स्तूप कला में लोक कथानक अथवा लोक जीवन से जुड़ी हुई घटनाओं को आत्मसात करते हुए उन्हें बौद्ध आदर्श में परिवर्तित कर दिया गया।

अगर एक तरह से देखा जाए, तो स्तूप की सम्पूर्ण संकल्पना ही जनजातीय तत्वों से ली गई है। किसी जनजातीय मुखिया की मृत्यु के पश्चात् उसकी समाधि पर एक टीला बनाया जाता था, बौद्ध पंथ ने उसे स्तूप के रूप में अपना लिया। स्तूप एक अर्द्धवृत्ताकार स्थापत्य के रूप में निर्मित किया गया, फिर उसके केन्द्रीय कक्ष में मृतक व्यक्ति का अवशेष रखा जाना भी समाधि का प्रतीकात्मक अर्थ बतता है।

स्तूप के प्रवेश द्वार पर जो पशु एवं मानव मूर्तियाँ निर्मित की जाती थीं, उनका भी संबंध लोक जीवन और लोक कथानकों से रहा था। उदाहरण के लिए, पशु के रूप में हाथी, घोड़े, बाघ, बंदर आदि का संबंध लोक कथानकों से था, परन्तु बौद्ध पंथ ने उन्हें अपने आदर्श रूप में समाहित कर लिया। हाथी महात्मा बुद्ध की माता के गर्भ में आने का प्रतीक, सांड उनके यौवन का प्रतीक, घोड़ा गृहत्याग का प्रतीक बन गया।

चूँकि लोक देवता के रूप में यक्ष-यक्षिणी को इस काल में काफी महत्व प्राप्त था, अतः स्तूप के प्रवेश द्वार पर उनकी भी मूर्तियाँ बनाई गईं और उन्हें भी बौद्ध आदर्शों में समाहित किया गया। उसी प्रकार, देवता के रूप में नाग-नागिन को भी महत्व प्राप्त था, अतः इन मूर्तियों में नाग-नागिन को भी शामिल किया गया। एक दिलचस्प तथ्य यह है कि लोक कथानक में 'शालभंजिका' काफी प्रसिद्ध थी। यह समृद्धि और सौभाग्य का प्रतीक मानी जाती थी। इसके विषय में प्रचलित था कि अगर यह पेड़ के पत्ते छूती, तो वे फूल बन जाते। अगर हम साँची के स्तूप के प्रवेश द्वार पर देखते हैं, तो वहाँ हमें पेड़ की शाखा से लटकी हुई शालभंजिका की मूर्ति दिखलाई पड़ती है।

इस प्रकार, हम देखते हैं कि बौद्ध पंथ ने अपनी लोकप्रियता बनाए रखने के लिए लोक प्रचलित कथानकों को बौद्ध आदर्शों में परिवर्तित किया और फिर उसे स्तूप कला में शामिल कर लिया।

प्रश्नः प्रारंभिक बौद्ध स्तूप-कला, लोक वर्ण्य-विषयों एवं कथानकों को चित्रित करते हुए बौद्ध आदर्शों की सफलतापूर्वक व्याख्या करती है। विशदीकरण कीजिए। (UPSC-2016)

उत्तर- बौद्ध पंथ का एक सबल तत्व रहा जनसामान्य के साथ इसका जुड़ाव तथा जनसामान्य के द्वारा इसकी व्यापक स्वीकृति। एक तरफ जहाँ इसने लोक भाषा पालि को ग्रहण किया था, वहीं दूसरी तरफ इसने लोक प्रचलित सांस्कृतिक प्रतीकों को भी अपनाया।

वस्तुतः बौद्ध धर्म की विख्यात स्थापत्य शैली, स्तूप कला, लोक जीवन से ली गई थी तथा यह क्रमिक रूप में विकसित हुई थी। जैसा कि हम जानते हैं जनजातीय पद्धति में मुखिया अथवा सरदार की मृत्यु के बाद मृतक संस्कार के पश्चात् एक छोटे से टीले बनाने की परम्परा प्रचलित थी। बौद्ध पंथ ने इस परम्परा को अपना लिया। उसी प्रकार जनसामान्य के बीच गैर-आर्य पंथों का गहरा प्रभाव था। इनमें एक था यक्ष एवं यक्षिणी की पूजा। मौर्यकाल में भी लोक कला के रूप में यक्ष-यक्षिणी की प्रतिमाएं बनाई जाती थीं। आगे बौद्ध पंथ ने स्तूप कला के साथ इसे भी जोड़ दिया। उसी प्रकार जनसामान्य के बीच नागपूजा, पशुपूजा, वृक्षपूजा आदि प्रचलित थे। स्तूप कला में धीरे-धीरे इन सभी को आत्मसात कर लिया गया। फिर जैसा कि हम देखते हैं मौर्यकाल में स्तूप कला राजकीय संरक्षण में पली एवं बढ़ी थी, किंतु ईसा की आरम्भिक शताब्दियों में कला का सामाजिक आधार व्यापक हुआ। अशोक ने अपने धर्म के प्रसार के क्रम में लोक उत्सव, समाज, समारोह एवं कुछ अन्य कार्यक्रमों को हतोत्साहित किया था। किंतु मौर्य काल के पश्चात् एक बार फिर इन तत्वों का प्रभाव बढ़ता गया तथा इन्होंने समकालीन धर्म एवं कला दोनों पर अपना प्रभाव छोड़ा।

स्तूप अर्द्धवृत्ताकार गुम्बद होता था जो जनजातीय लोगों के मृतक संस्कार टीले की तरह था। उसके केंद्र में हर्मिक होती थी जिसमें किसी मृतक व्यक्ति के अवशेष को रखा जाता था। इसके साथ वेदिका एवं प्रवेश द्वार भी निर्मित किया गया। वेदिका एवं प्रवेश द्वार पर विभिन्न प्रकार के पशुओं, नाग एवं लोक जीवन से जुड़ी हुई अनेक मूर्तियां बनाई जाती थीं। बौद्ध पंथ ने धीरे-धीरे इन्हें धर्म के साथ आत्मसात कर लिया।

इस प्रकार हम देखते हैं बौद्ध स्थापत्य की प्रमुख शैली लोक जीवन से जुड़ी हुई थी तथा लोक प्रचलित तथ्यों को लेकर क्रमिक रूप में विकसित हुई।

■ **चैत्य-** चैत्य बौद्धों का पूजा गृह था। अधिकांश चैत्य पहाड़ों को काटकर निर्मित किये जाते तथा ये मौर्यकालीन गुफा वास्तुकला के विकसित रूप थे। सामान्यतः चैत्य आयताकार होता था तथा उसका अंतिम किनारा अर्द्धवृत्ताकार होता था। उसके केंद्र में एक स्तूप का भी निर्माण किया जाता था। इसका उद्देश्य उपासना था। फिर स्तूप के साथ मानव मूर्ति भी जोड़ी जाने लगी तथा स्तूप के छत को घोड़े की नाल के आकार में काट दिया जाता था, ताकि उससे होकर रोशनी स्तूप के ऊपर पड़े। इसे चैत्य खिड़की कहा जाता था। यह अपने आप में एक महत्वपूर्ण तकनीकी विकास था।

सातवाहनों के अधीन पश्चिमी भारत में पहाड़ों को काट कर अनेक स्तूप बनाये गए। उदाहरण के लिए, नासिक, भज, कन्हेरी, कार्ले, पीतलखोरा आदि।

■ **विहार-** अगर चैत्य बौद्धों का पूजागृह था, तो विहार भिक्षुओं का निवास स्थल। जहाँ-जहाँ चैत्यों का निर्माण हुआ, वहाँ निवास स्थल के रूप में विहारों का भी निर्माण हुआ। विहार भी पत्थरों को काटकर निर्मित किए गए थे, किंतु मौर्यकालीन गुफा वास्तुकला की तुलना में ये कहीं अधिक विकसित थे। इन विहारों में बरामदों के साथ-साथ कई कमरों का भी निर्माण किया जाने लगा।

गुप्तकालीन स्थापत्य

- गुप्तकाल में कला और साहित्य ने क्लासिकल मानदण्ड स्थापित कर लिया था। इस उत्कृष्ट सौंदर्य बोध के असाधारण प्रतिमान के कारण ही इसे 'स्वर्ण युग' की संज्ञा से अभिहित किया जाता है। गुप्त कला को मूल उत्प्रेरणा ब्राह्मण पंथ से मिली। यद्यपि इस पर अन्य पंथों का प्रभाव भी बना रहा।
- **धार्मिक स्थापत्य :** इस काल में धार्मिक स्थापत्य दो रूपों में दिखाई पड़ता है- (i) गुफा मंदिर तथा (ii) इमारती मंदिर।
- **गुफा मंदिर :** इस काल का गुफा स्थापत्य पूर्ण रूप से बौद्ध स्थापत्य कहा जा सकता है। इसके केवल कुछ अपवाद हैं। उदाहरण के लिए, उदयगिरि में एक ब्राह्मणवादी गुफा में एक अभिलेख है जो चन्द्रगुप्त द्वितीय के राज्यकाल का है। यहाँ विष्णु की वराह प्रतिमा सर्वोत्कृष्ट रचना है जो अवतारवाद की पूर्ण अभिव्यक्ति है। विष्णु के साथ यहाँ शैव और जैन धर्म से भी संबंधित गुफाएँ हैं। उदयगिरि, गुफा मंदिर एवं स्वतंत्र रूप से बने मंदिर के बीच संक्रमण की अवस्था को दर्शाता है। इसके अलावा, इस काल में अजंता और बाघ की गुफाएँ सबसे प्रसिद्ध कही जा सकती हैं जो कि बौद्ध धर्म से सम्बद्ध हैं।
- **इमारती मंदिर :** गुप्तकाल भारतीय मंदिर स्थापत्य की दृष्टि से महत्वपूर्ण समय का प्रतिनिधित्व करता है। हालाँकि, इस काल में मंदिर स्थापत्य अपनी शैशवास्था में था, किंतु इसमें एक विकासक्रम भी दृष्टिगोचर है। इस काल का सबसे आरम्भिक उदाहरण साँची का मंदिर सख्या-17 है। इसके साथ ही इस समय तिगवा का विष्णु मंदिर, भूमरा और खोह का शिव मंदिर, नचनाकुठार का पार्वती मंदिर, दह पर्वतिया मंदिर (असम) तथा देवगढ़ का दशावतार मंदिर प्रमुख हैं। देवगढ़ का दशावतार मंदिर, पंचायतन शैली का प्राचीनतम उदाहरण है। मंदिर स्थापत्य के ये सभी उदाहरण प्रस्तर निर्मित हैं। इन पत्थर के बने मंदिरों के साथ-साथ ईंट से बने मंदिर भी इस काल में बड़ी संख्या में बनाए गए। इनमें प्रमुख मंदिर भीतरगाँव (कानपुर), पहाड़पुर (बांग्लादेश) और सिरपुर (छत्तीसगढ़) में अवस्थित हैं।

साँची का प्राचीन मंदिर

देवगढ़ का दशावतार मन्दिर

- **स्तूप, चैत्य एवं विहार** – मंदिरों के अतिरिक्त इस काल में स्तूपों, चैत्यों व विहारों का भी निर्माण हुआ। इस काल में जो बौद्ध स्तूप, चैत्य और विहार बनाए गए उनके प्रमुख उदाहरण जौलिया, चारसद्दा तथा गांधार के तक्षशिला में पाये जाते हैं। पूर्वी भारत में सारनाथ में स्थित धमेख स्तूप इस काल में विस्तृत किया गया, जो कि आकार में ढोलाकार है।

पूर्व मध्यकालीन स्थापत्य

पूर्व मध्ययुग में कला और स्थापत्य के क्षेत्र में अत्यंत महत्वपूर्ण विकास हुए। इस समय उत्तर भारत में कश्मीर, राजस्थान तथा ओडिशा सहित अन्य क्षेत्रों में स्थापत्य और मूर्तिकला की विशिष्ट क्षेत्रीय शैलियाँ विकसित हुईं। इसके साथ ही प्रायद्वीपीय भारत में राष्ट्रकूट, चालुक्य, पल्लव तथा चोलों के अधीन भी विशाल स्तर पर निर्माण कार्य किए गए।

पूर्व मध्यकाल तक भारत में मंदिर स्थापत्य निर्माण की तीन स्वतंत्र शैलियों का वर्णन मिलता है- नागर, द्रविड़ तथा वेसर शैली। नागर शैली का क्षेत्र कश्मीर से लेकर विंध्य तक फैला है। वहीं कृष्णा तथा कावेरी नदियों के बीच की भूमि द्रविड़ शैली की उत्कर्ष भूमि है, जबकि वेसर शैली का क्षेत्र विंध्य से कृष्णा नदी के बीच का है। तीनों शैलियों की विशेषताएँ निम्नवत् हैं-

नागर शैली	द्रविड़ शैली	वेसर शैली
1. नागर शैली के मंदिर की आधारभूत योजना वर्गाकार होती है जिसे एक ऊँचे चबूतरे पर बनाया जाता था।	1. द्रविड़ शैली के मंदिरों की सबसे बड़ी विशेषता इनके पिरामिडीय शिखर हैं, जिनका उत्थान उत्तरोत्तर छोटी मंजिलों के रूप में होता है।	1. वेसर शैली एक संकर शैली है। 'वेसर' का शाब्दिक अर्थ खच्चर होता है, इसमें उत्तर तथा दक्षिण दोनों शैलियों के तत्व लिए गए हैं।
2. मंदिर का उत्थान इसके उत्तल शिखर से रेखांकित होता है।	2. शिखर के ऊपर स्तूपिका बनी होती है।	2. इसमें छत विहीन प्रदक्षिणापथ का विधान मिलता है।
3. शिखर के ऊपर आमलक बनाया जाता और उसके ऊपर कलश।	3. मंदिर के चारों ओर प्राचीर के मध्य तोरण द्वार का निर्माण, जिसे गोपुरम कहा जाता है।	3. मंदिर की दीवारों पर रथ का नियोजन दिखाई देता है।
4. विकसित मंदिरों में मुख्य शिखर के अतिरिक्त सजावट के लिए गौण शिखर का भी निर्माण किया जाता, जिन्हें उरूश्रृंग कहा जाता था।	4. मंदिर के परिसर में अनेक मंडपों का निर्माण।	4. इसमें अलंकरण के लिए नागर तथा द्रविड़ शैली की विशेषताओं का उपयोग किया जाता है।

लिंगराज मंदिर, भुबनेश्वर

- **राष्ट्रकूटकालीन स्थापत्य कला :** राष्ट्रकूट शासक शैवमतानुयायी थे, अत: उनके काल में शैव मंदिर एवं मूर्तियों का ही निर्माण प्रधान रूप से हुआ। एलोरा, एलीफैण्टा, जागेश्वरी, मण्डपेश्वर जैसे स्थान कलाकृतियों के निर्माण के प्रसिद्ध केन्द्र थे। इनमें एलोरा तथा एलीफैण्टा विशेष उल्लेखनीय हैं।
- **एलोरा :** एलोरा का स्थापत्य ब्राह्मण, जैन तथा बौद्ध तीनों धर्मों से संबंधित है। उत्कृष्ट बौद्ध एवं जैन गुफाओं के

अतिरिक्त एलोरा गुफाओं को भव्य कैलाशनाथ मंदिर के कारण भी जाना जाता है। एलोरा के कैलाशनाथ मंदिर के प्रतिमा शास्त्रीय निरूपण में शिव, शिव-पार्वती, कैलाश पर्वत को हिलाता रावण, दुर्गा, विष्णु, सप्तमातृकाएँ, गंगा, गणेश, यमुना तथा सरस्वती देवियों को भी स्थान मिलता है। वस्तुत: कैलाश मंदिर को उपमहाद्वीप के गुफा स्थापत्य का चरमोत्कर्ष कहा जाता है।

कैलाश मंदिर, एलोरा

- **एलीफैण्टा :** एलीफैण्टा में सर्वाधिक सुन्दर प्रतिमा महेश की है।
- **चालुक्यकालीन स्थापत्य कला :** दक्कन में, कर्नाटक के कई स्थानों पर मंदिरों के गुफा स्थापत्य और स्वतंत्र संरचनाओं के पूर्व मध्ययुगीन उदाहरण मिलते हैं। बादामी और एहोल, प्रारम्भिक स्थापत्य काल (6वीं से 8वीं सदी के शुरूआती वर्ष) का प्रतिनिधित्व करते हैं। स्थापत्य काल में दूसरे और अपेक्षाकृत भव्य चरण का प्रतिनिधित्व 8वीं सदी में पट्टदकल में बने मंदिरों के द्वारा होता है। चालुक्यों के मंदिर स्थापत्य में उत्तर और दक्षिण दोनों की स्थापत्य विशिष्टताएँ दिखलाई पड़ती हैं, किंतु इन शताब्दियों में दक्कन के स्थापत्य का अपना स्वतंत्र अस्तित्व भी तैयार हो गया।
- **एहोल** - एहोल में दो प्रभावशाली गुफा मंदिर विद्यमान हैं- एक जैन तथा दूसरा, शैव और दोनों की अंत: दीवारें अत्यधिक अलंकृत हैं।
- **बादामी** - बादामी की गुफाएँ लाल बलुआ पत्थर को काटकर बनाई गई हैं। यहाँ तीन प्रमुख गुफाओं में सबसे बड़ी गुफा वैष्णव है, जबकि एक शैव एवं दूसरी जैन है।
- **पट्टदकल** - पट्टदकल में दस मंदिर प्राप्त होते हैं, जिनमें विरूपाक्ष का मंदिर सर्वाधिक सुंदर तथा आकर्षक है। यह शिव को समर्पित है तथा इसका निर्माण लोकमहादेवी ने करवाया था।
- **होयसल स्थापत्य :** दक्कन में मंदिर स्थापत्य का दूसरा महत्वपूर्ण चरण होयसल राजवंश से जुड़ा है, जिन्होंने दक्षिणी कर्नाटक में अपनी राजधानी द्वारसमुद्र से शासन किया। इस काल के मंदिरों के अवशेष हेलबिड, बेलूर तथा सोमनाथपुर से मिले हैं। इनमें सबसे भव्य मंदिर 12वीं सदी में हेलबिड में बना होयसलेश्वर मंदिर है, जबकि बेलूर स्थित केशव मंदिर एक विशाल आँगन में बने अनेक मण्डपों का समुच्चय है। सोमनाथपुर में 13वीं सदी का केशव मंदिर, होयसल कालीन मंदिर स्थापत्य और मूर्तिकला का चरम बिन्दु कहा जा सकता है।

पट्टादकल का विरूपाक्ष मंदिर एवं पापनाथ का मंदिर

- **पल्लव स्थापत्य :** दक्षिण भारत में प्रस्तरीय स्थापत्य का इतिहास 7वीं शताब्दी में भक्ति की बढ़ती लोकप्रियता से जुड़ा हुआ था। पल्लव वास्तुकला ही दक्षिण की द्रविड़ कला शैली का आधार बनी। उसी से दक्षिण भारतीय स्थापत्य के तीन प्रमुख अंगों का जन्म हुआ- (i) मण्डप, (ii) रथ तथा (iii) विशाल मंदिर। महान कलाविद् पर्सी ब्राउन ने पल्लव वास्तुकला के विकास की शैलियों को चार भागों में विभक्त किया है-
- **महेन्द्रवर्मन शैली :** महेन्द्रवर्मन शैली में मंडप शैली की प्रधानता है। मण्डप से आशय है स्तंभों पर टिका हुआ एक हॉल, जो गर्भगृह के सामने निर्मित किया जाता था, जिसमें संगीत, नृत्य, संकीर्तन तथा अन्य प्रकार के अनुष्ठान किए जा सकते थे।

- **मामल्ल शैली :** इस शैली का विकास नरसिंहवर्मन प्रथम 'महामल्ल' के काल में हुआ। इसके अन्तर्गत दो प्रकार के स्मारक बने- मण्डप तथा एकाश्मक मंदिर (रथ)। इस शैली में निर्मित सभी स्मारक मामल्लपुरम् में विद्यमान हैं। यहाँ मुख्य पर्वत पर दस मण्डप बनाए गए हैं जिनमें आदिवराह मण्डप, महिषमर्दिनी मण्डप तथा रामानुज मण्डप आदि विशेष प्रसिद्ध हैं। मामल्लशैली की दूसरी रचना रथ अथवा एकाश्मक मंदिर हैं। यह लकड़ी के रथ की अनुकृति है और इसे पहाड़ से अलग करके तथा तराशकर बनाया गया है। महाबलीपुरम् में कुल 8 रथों का निर्माण किया गया जिसमें सबसे बड़ा रथ युधिष्ठिर रथ है तथा सबसे छोटा द्रौपदी रथ।
- **राजसिंह शैली :** इस काल में भी पहाड़ों को काटकर मंदिर बनाए जाते रहे थे। उदाहरण के लिए, काँचीपुरम् का कैलाशनाथ मंदिर, परन्तु इस शैली में पहली बार स्वतंत्र रूप से बनाए गए मंदिर का उदाहरण है- महाबलीपुरम् का तटीय मंदिर। इस मंदिर के विकास तक हमें द्रविड़ स्थापत्य शैली की लगभग सभी आधारभूत विशेषताएँ विकसित होती दिखती हैं; यथा- स्तम्भ एवं मण्डप का निर्माण, खंडीय शिखर, स्तूपिका आदि।

महाबलीपुरम् का तटीय मंदिर एवं युधिष्ठिर रथ

- **नन्दिवर्मन शैली :** इस शैली के अन्तर्गत अपेक्षाकृत छोटे मंदिरों का निर्माण हुआ। इसके उदाहरण काँची के मुक्तेश्वर एवं मातंगेश्वर मंदिर तथा गुड्डिमल्लम् का परशुरामेश्वर मंदिर आदि हैं। शैली की दृष्टि से धर्मराज रथ की अनुकृति प्रतीत होते हैं।
- **चोल स्थापत्य :** चोलवंशीय शासक उत्साही निर्माता थे, उनके समय में कला एवं स्थापत्य के क्षेत्र में महत्वपूर्ण प्रगति हुई। चोल काल दक्षिण भारतीय कला का स्वर्ण युग कहा जा सकता है। चोल स्थापत्य के विकास के मुख्यत: तीन चरण दिखाई देते हैं- प्रारम्भिक काल (850-985 ई.), मध्य काल (985-1070 ई.) तथा उत्तरकाल (1070-1270 ई.)।
- चोल स्थापत्य के प्राचीनतम चरण का प्रतिनिधित्व नार्त्तामलाई का शिव मंदिर करता है। इस प्रकार का दूसरा मंदिर कन्नूर का बालसुब्रह्मण्य मंदिर है जिसे आदित्य प्रथम ने बनवाया था। इसी समय का एक अन्य मंदिर कुम्बकोणम् में बना नागेश्वर मंदिर है।
- चोल मंदिर स्थापत्य का दूसरा चरण आदित्य-I और परांतक-I के काल को कह सकते हैं। परांतक प्रथम के काल में निर्मित श्रीनिवासनल्लूर का कोरंगनाथ मंदिर इस चरण का प्रमुख उदाहरण है। चोल मंदिर स्थापत्य का तीसरा चरण शेम्बियन महादेवी तथा राजराज-I के शासन काल के शुरूआती दौर को कहा जा सकता है। इस चरण में चोल स्थापत्य कला का चरमोत्कर्ष तंजौर के बृहदेश्वर मंदिर में देखा जा सकता है। इसका विमान 60 मीटर लम्बा है तथा इसके शिखर अत्यंत विशाल हैं। इस शिव मंदिर को अपने काल का सबसे भव्य मंदिर कहा जा सकता है। चोल मंदिर स्थापत्य के अंतिम चरण में विमान की तुलना में गोपुरम् अधिक महत्वपूर्ण हो गए। इस तथ्य का अवलोकन चिदम्बरम् के शिव मंदिर में किया जा सकता है।

वृहदेश्वर मंदिर, तंजौर

प्रश्न- मंदिर वास्तुकला के विकास में चोल वास्तुकला का उच्च स्थान है। विवेचना कीजिए (UPSC-2013, 100 शब्द)

उत्तर: मंदिर वास्तुकला में द्रविड़ स्थापत्य की आधारभूत संरचना पल्लव शासकों के अधीन विकसित हुई थी, किंतु उसका स्पष्ट एवं वास्तविक रूप चोलों के काल में निखर कर आया। चोलकालीन स्थापत्य में मंडप, शिखर एवं विमान के साथ-साथ गोपुरम् का विकास भी देखा गया।

मंडप का निर्माण स्तंभयुक्त हॉल के रूप में आनुष्ठानिक कार्य पूरा करने के लिए किया जाता था। उसी प्रकार, गर्भगृह के ऊपर खंडीय शिखर का निर्माण किया जाता, जो ऊपर जाते हुए उत्तरोत्तर छोटा होता जाता। उसके ऊपर स्तूपिका निर्मित की जाती। उत्तुंग शिखरों के माध्यम से चोल शासकों ने अपने राजत्व के गौरव को व्यक्त किया। गर्भगृह से लेकर स्तूपिका तक की उठानी को विमान कहा जाता था। फिर इस काल में मंदिर के क्षैतिज विस्तार को देखते हुए ऊँचा प्रवेश द्वार बनाया जाता, जिसे गोपुरम कहा जाता। चोल शासक राजराज प्रथम के द्वारा निर्मित वृहदेश्वर मंदिर तथा राजेन्द्र प्रथम के द्वारा निर्मित गंगईकोंडचोलपुरम का मंदिर, मंदिर निर्माण कला की विकसित अवस्था को दर्शाते हैं।

प्रश्न- प्राचीन काल में स्थापत्य के विकास को प्रेरित करने में राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक एवं धार्मिक कारकों की भूमिका को स्पष्ट कीजिये।

उत्तर: प्राचीन काल में स्थापत्य के निर्माण के कई चरण रहे और अंत में भौगोलिक आधार पर ये तीन शैलियों में विभाजित हो गया। यथा- नागर शैली, द्रविड़ शैली और वेसर शैली। तीनों ही शैलियों में अनेक मंदिरों का निर्माण किया गया।

प्रेरित करने वाले कारक:

राजनीतिक कारक-

- कई राजवंश निचली श्रेणी से आए थे। अतः अपने वंश की प्रतिष्ठा स्थापित करने के लिये वे ब्राह्मणों से अपना संबंध जोड़ते थे और मंदिरों को संरक्षण देते थे।
- राजवंश के धार्मिक विश्वास से भी मंदिर के निर्माण प्रभावित हुए।
- अपनी विजय के उपलक्ष्य में भी मंदिरों के निर्माण कराए जाते थे। उदाहरण के लिये, राजेंद्र प्रथम के द्वारा गंगईकोंड चोलपुरम् मंदिर का निर्माण।
- अतिरिक्त शक्ति एवं प्रतिष्ठा प्राप्त करने के लिये तत्कालीन शासकों ने अपना संबंध देवताओं से जोड़ा। उदाहरण के लिये, चोल शासकों के द्वारा अपनी प्रतिमाएँ मंदिरों में स्थापित करवाई जाती थीं।

आर्थिक कारक- भूमि अनुदान के परिणामस्वरूप एक तरफ भूमिधारकों के वर्ग का उद्भव हुआ, वहीं दूसरी तरफ कई क्षेत्रीय राजवंश भी स्थापित हुए। इनके द्वारा मंदिरों का निर्माण करवाया गया। उसी प्रकार, व्यापारिक गतिविधियों से उत्पन्न एक संपन्न व्यापारी वर्ग ने चैत्य एवं विहारों के साथ-साथ मंदिरों का भी निर्माण करवाया।

सामाजिक कारक- कुछ नवीन सामाजिक वर्गों के द्वारा अपने सामाजिक दर्जे को ऊँचा उठाने के लिये मंदिरों का निर्माण कराया गया। उदाहरण के लिये, राजपूत राजवंश द्वारा बड़े पैमाने पर मंदिरों का निर्माण कराया गया।

धार्मिक कारक- धार्मिक विश्वास से प्रेरित होकर भी मंदिरों का निर्माण कराया जाता था तथा अपने विश्वास के अनुकूल देवताओं की प्रतिमाएँ स्थापित की जाती थीं। उदाहरण के लिये, चोल शासकों ने शैव मंदिर का निर्माण करवाया, तो विजयनगर शासकों ने वैष्णव मंदिर का।

अभ्यास प्रश्न- *शैलकृत स्थापत्य (Rock-cut Architecture) प्रारंभिक भारतीय कला के ज्ञान के अति महत्वपूर्ण स्रोतों में से एक का प्रतिनिधित्व करता है। विवेचना कीजिए। (UPSC-2020, 150 शब्द)*

■■■